विषय-सूची

प्रस्तावना

1. ईशस्तुति : सत्ता तुम्हारी भगवन 5
2. धर्म के लक्षण 7
3. आर्यसमाज के नियम (3 से 6) 10
4. अभियान गीत : धरम बाँसुरी तू बजाए 14
5. व्यायाम 16
6. प्रातः उठने के लाभ 19
7. उद्बोधन गीत : उठ जाग मुसाफिर 22
8. सत्संग का महत्त्व 24
9. योग और उसके अंग 27
10. ईश विनय : आनन्द रूप भगवन 30
11. स्वामी श्रद्धानन्द 32
12. महात्मा हंसराज 37
13. स्वामी दर्शनानन्द 42
14. आर्य-पथिक पं. लेखराम 46
15. उद्घोष : हम दयानन्द के सैनिक 51
16. मेरा देश 53
17. रोगी कौन नहीं? 57
18. अन्धविश्वास का फल 61
19. अटल प्रीति : तुम हो प्रभु चाँद 64
20. हमारे पर्व 66
21. सन्ध्या तथा दैनिक हवन के मन्त्र 71
22. यज्ञ की आरती तथा शान्ति पाठ 84

प्रश्न पत्र का प्रारूप 86

पठनीय पुस्तकें 87

आर्य समाज के नियम 88

पाठ-1

ईशस्तुति

सत्ता तुम्हारी भगवन जग में समा रही है।
तेरी दया सुगन्धि हर गुल से आ रही है।।1।।
रवि चन्द्र और तारे तूने बनाए सारे।
इन सब में ज्योति तेरी इक जगमगा रही है।।2।।
विस्तृत वसुन्धरा पर सागर बहाए तूने।
तह जिनकी मोतियों से अब जगमगा रही है।।3।।
दिन-रात प्रातः सन्ध्या मध्याह्न भी बनाया।
हर ऋतु पलट-पलट कर यौवन दिखा रही है।।4।।
सुन्दर सुगन्धि वाले पुष्पों में रंग तेरा।
यह ध्यान फूल पत्ती तेरा दिला रही है।।5।।
हे ब्रह्म विश्वकर्त्ता, वर्णन हो तेरा कैसे।
जलथल में तेरी महिमा, हे ईश छा रही है।।6।।
भक्ति तुम्हारी भगवन क्यों कर हमें मिलेगी।
माया तुम्हारी स्वामी हमको भ्रमा रही है।।7।।
देवी चरण शरण है, तुझसे यही विनय है।
हो दूर वह अविद्या हमको भुला रही है।।8।।

भाव : परमेश्वर ही सर्वव्यापक, दयालु, सूर्य-चन्द्रादि का प्रकाशक, पृथ्वी, समुद्र, दिन, रात, प्रातः, सन्ध्या, मध्याह्न तथा ऋतुओं का निर्माता

है। वही जल-थल में उत्पन्न होने वाली सम्पूर्ण वनस्पतियों व पुष्पों का निर्माता है। अज्ञान के कारण मनुष्य उसकी भक्ति नहीं कर पाता। ईश्वर से प्रार्थना है कि वह विश्वकर्मा प्रभु हमें अपनी सच्ची भक्ति प्रदान करें। हमारी अविद्या दूर करें।

अभ्यास

1. जग में किसकी सत्ता समाई हुई है?
2. हर गुल से किस वस्तु की सुगन्धि आ रही है?
3. भक्त ने भगवान से क्या विनय की है?

> जीवन तब आरम्भ होता है, जब आपको दिखाई देने लगता है कि आप ज़िन्दगी से क्या चाहते हैं, क्या करना चाहते हैं और खुद क्या बनना चाहते हैं?

पाठ-2

धर्म के लक्षण

सामान्यतः हिन्दू, मुस्लिम, सिख, ईसाई आदि को अलग-अलग धर्म के मानने वाले समझ लिया जाता है। वास्तव में यह ठीक नहीं है। हिन्दू का अर्थ है एक देश विशेष (भारत) में रहने वाला और वहाँ की संस्कृति को मानने वाला। सिक्ख, बौद्ध, जैन उसी संस्कृति के अन्तर्गत विशेष मत या पन्थ हैं। इस्लाम और ईसाइयत विदेशी संस्कृतियों से प्रभावित मजहब हैं। कोई व्यक्ति हिन्दू-मुस्लिम या ईसाई होते हुए धार्मिक भी हो सकता है और अधार्मिक भी। धार्मिक का अर्थ है ईमानदार और अधार्मिक का अर्थ है बेईमान। धार्मिकता ईमानदारी को कहते हैं और अधार्मिकता बेईमानी को।

जिस प्रकार देश एक है तथा प्रदेश अनेक हैं, उसी प्रकार मानव मात्र का धर्म एक है और मत अर्थात् विचारधाराएँ अनेक हैं। धर्म उन मानवीय गुणों का नाम है, जिन्हें धारण करके मनुष्य उन्नति करता है। कुछ मानवीय सद्‌गुण ऐसे हैं, जो संसार के सभी मनुष्यों के लिए उपयोगी हैं, जैसे—ईमानदारी, सदाचार आदि। ये ग्रहण करने व आचरण करने के योग्य हैं। मनु महाराज ने धर्म के दस लक्षण बताए हैं; वे सबके सब मनुष्य मात्र के लिए उपयोगी हैं :

धृति क्षमा दमोऽस्तेयं शौचमिन्द्रिय निग्रहः,
धीर्विद्या सत्यमक्रोधो दशकं धर्म लक्षणम्।

अर्थ : सभी मानते हैं कि व्यक्ति को धीरज रखना चाहिए, क्षमाशील होना चाहिए, अपने मन पर काबू रखना चाहिए, किसी के धन की चोरी नहीं करनी चाहिए, शरीर और मन से पवित्र होना चाहिए, इन्द्रियों का दास नहीं बनना चाहिए, उन्हें वश में रखना चाहिए, क्रोध नहीं करना चाहिए, सत्य का पालन करना चाहिए। पर ऐसा मानने और कहने मात्र से कोई व्यक्ति धार्मिक नहीं हो जाता। धार्मिक या ईमानदार उसी को कहा जाएगा, जो इन आस्थाओं या मान्यताओं के अनुकूल आचरण करेगा।

इन लक्षणों में किसी विशेष ग्रन्थ को पढ़ने या न पढ़ने की बात नहीं कही गई। ईश्वर को मानने या न मानने की शर्त भी नहीं लगाई गई। किसी अवतार, पीर, पैगम्बर को भी नहीं बताया गया। कोई व्यक्ति किसी भी संस्कृति या मज़हब को मानने वाला हो, यदि उसमें ये बातें हैं तो वह धार्मिक है, और यदि ये बातें उसमें नहीं हैं, तो वह धार्मिक नहीं है। ये गुण धर्म की पहचान हैं। उपर्युक्त दस लक्षणों या पहचानों का सम्बन्ध व्यक्ति तथा समाज, इकाई और समूह दोनों के साथ है। जिस समाज के सदस्यों में या जिस समूह की इकाइयों में ये गुण होंगे, वह समाज, वह राष्ट्र, वह समूह धार्मिक और सभ्य कहा जाएगा, वह इकाई या व्यक्ति तो धार्मिक होगा ही।

ऋषियों ने धर्म की एक और परिभाषा की है : ''यतोऽभ्युदय निःश्रेयस सिद्धिः स धर्मः''। अर्थात् धर्म वह है, जिस पर आचरण करने से अपनी और सबकी उन्नति हो और निःश्रेयस अर्थात् आत्मकल्याण भी हो।

उदाहरण के लिए, एक किसान अपने खेत में उत्तम अन्न पैदा करता है, वह स्वयं खुशहाल होने के साथ-साथ समाज को भी स्वस्थ और समृद्ध बनाता है, जबकि दूसरा तम्बाकू की खेती करके स्वयं भले ही मालामाल हो जाए पर समाज के स्वास्थ्य की हानि करता है। इसी प्रकार अच्छी एवं शुद्ध वस्तुओं का व्यापारी अपने साथ-साथ समाज का भी हित करता है, जबकि मिलावटी तथा हानिकर वस्तुओं का व्यापारी

पैसे की दृष्टि से स्वयं भले ही पैसा कमा ले किन्तु वह समाज का हत्यारा है। वास्तव में वह अपनी भी हानि करता है और सबकी आँखों से भी गिर जाता है। अतः कर्म ऐसा करना चाहिए, जिसमें अपने साथ-साथ दूसरों का भी हित हो, आत्मा मैली न हो।

कभी-कभी धर्म और अधर्म के समझने में विद्वान भी भटक जाते हैं। अतः 'आत्मनः प्रतिकूलानि परेषां न समाचरेत्'—अर्थात् जो हमारे प्रतिकूल हो, वह व्यवहार हमें दूसरों के साथ नहीं करना चाहिए।

अभ्यास

1. इस पाठ के आधार पर निम्नलिखित वचनों का अर्थ लिखो :
   (क) धृति, क्षमा, दमोऽस्तेय, शौच, इन्द्रियनिग्रह,
   धीर्विद्या, सत्यं, अक्रोधः।
   (ख) आत्मनः प्रतिकूलानि परेषां न समाचरेत्।
2. वे कौन से गुण हैं, जिनके कारण व्यक्ति को धार्मिक कहा जा सकता है?

पाठ-3

आर्य समाज के नियम

(3 से 6 तक)

तीसरा नियम

"वेद सब सत्य विद्याओं की पुस्तक है। वेद का पढ़ना-पढ़ाना और सुनना-सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है।"

व्याख्या

आर्य समाज के पहले दो नियमों में ईश्वर के स्वरूप की व्याख्या की गई है। तीसरे नियम में यह बताया गया है कि वेद क्या है और उसके सम्बन्ध में हमारा कर्त्तव्य क्या है।

वेद चार हैं : ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद।

इस नियम में 'वेद' शब्द पहले है और 'सत्य विद्याएँ बाद में। इसका अभिप्राय यह है कि कौन सी विद्या सत्य है और कौन सी नहीं, इसका निर्णायक वेद है। वेद के द्वारा सत्यासत्य की परख होनी चाहिए, किसी भी भ्रान्ति या हठ के आधार पर सत्य, असत्य या वेद की परख नहीं हो सकती। वेद अपौरुषेय हैं अर्थात् वे किसी पुरुष या व्यक्ति ने नहीं बनाए। सृष्टि के आदि में परमेश्वर ने चारों वेदों का ज्ञान अग्नि, वायु, आदित्य और अंगिरा को प्रदान किया। उन्होंने उसे आगे प्रचारित किया। वही ज्ञान आज पुस्तक रूप में है। अतः सत्यासत्य एवं

कर्त्तव्याकर्त्तव्य को जानने के लिए वेद को पढ़ना और सुनना आवश्यक है। ज्ञान को आगे बढ़ाने तथा पूर्णतया ग्रहण करने के लिए उसे पढ़ाना और सुनाना भी अपेक्षित है। वेद ज्ञान मनुष्य मात्र के लिए है, किसी व्यक्ति, जाति, देश या वर्ग विशेष के लिए नहीं। प्रत्येक व्यक्ति को वेद पढ़ने का अधिकार है।

यद्यपि छह शास्त्र, उपनिषद्, पुराण, स्मृतियाँ, रामायण, महाभारत और गीता आदि प्रामाणिक ग्रन्थ माने जाते हैं पर ये वेदानुकूल होने से प्रमाण हैं। वेद ईश्वरीय ज्ञान होने से प्रमाण है अतः वे सबसे ऊँचे हैं। यही कारण है कि आर्य समाज उनके पढ़ने-पढ़ाने और सुनने-सुनाने को प्रत्येक श्रेष्ठ व्यक्ति का परम धर्म मानता है।

चौथा नियम

"सत्य के ग्रहण करने और असत्य को छोड़ने में सर्वदा उद्यत रहना चाहिए।"

व्याख्या

सत्य क्या है?

जो वस्तु जैसी हो उसे वैसे ही मानना, कहना और करना सत्य है। इसके विरुद्ध मानना, कहना और करना असत्य है। मनुष्य अल्पज्ञ है, उसे स्वभावतः सत्य और असत्य का सही ज्ञान नहीं हो पाता। अपने अध्ययन, प्रयोग और अनुभव के आधार पर वह सत्य और असत्य का निर्णय करता है। कभी-कभी वे मान्यताएँ जिन्हें मनुष्य सत्य मानता रहा है, असत्य प्रमाणित होती हैं और कभी असत्य मानी गई बातें सत्य सिद्ध होती हैं। पहले कुछ लोग धरती को चपटी मानते थे पर यह गोल सिद्ध हुई है। विमान तथा आकाशवाणी कपोल-कल्पना माने जाते थे, वे सत्य सिद्ध हुए हैं। समझदार व्यक्ति का कर्तव्य है कि वह असत्य सिद्ध होने वाली बातों, मान्यताओं को छोड़ता जाए तथा स्वाध्याय और खोज आदि

के द्वारा उपलब्ध सत्य ग्रहण करता जाए। व्यक्ति को अपना आचरण सत्य पर आधारित रखना चाहिए, सत्य की खोज तथा उसके आचरण में सदा लगे रहना चाहिए, असत्य को तुरन्त छोड़ देना चाहिए।

पाँचवाँ नियम

"सब काम धर्मानुसार अर्थात् सत्य और असत्य को विचार कर करने चाहिए।"

व्याख्या

इस नियम का सम्बन्ध हमारे प्रतिदिन के जीवन से है। हम प्रातः उठने से लेकर रात को सोने तक, कुछ न कुछ करते रहते हैं। रात को स्वप्न में भी हमारा मन कुछ न कुछ करता रहता है। यह नियम हमें शिक्षा देता है कि जागते या सोते, हम जो कुछ भी करें वह धर्म के अनुसार हो, पाप न हो।

जिन नियमों से संसार में सुख-शान्ति रहती है, अपनी तथा दूसरों की उन्नति अर्थात् अभ्युदय होता है, जिनका आचरण कल्याणकारी है, वे नियम धर्म कहलाते हैं।

"नास्ति सत्यात्परो धर्मो नासत्यात्पातकं परम्" सत्य से बड़ा धर्म और असत्य से बड़ा पाप नहीं है।

छठा नियम

"संसार का उपकार करना इस समाज का मुख्य उद्देश्य है, अर्थात् शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति करना।"

व्याख्या

आर्य समाज का उद्देश्य केवल आर्यों, हिन्दुओं या भारतवासियों का ही उपकार करना नहीं है बल्कि वह सारे संसार की जातियों, सभी मतों और सम्प्रदायों के लोगों की भलाई करना चाहता है। यह भलाई तीन प्रकार की है—लोगों के शरीर की उन्नति, आत्मा की उन्नति तथा सामाजिक उन्नति।

आर्य समाज चाहता है कि शरीर की उन्नति और लम्बी आयु के लिए ब्रह्मचर्य का पालन किया जाए। सादा खान-पान, व्यायाम, नियमपूर्वक स्नान, ध्यान, सन्ध्या, प्रार्थना तथा उत्तम ग्रन्थों के पाठ से ब्रह्मचर्य की रक्षा और शरीर की उन्नति होती है। गृहस्थ जीवन में भी संयमी रहना चाहिए।

आत्मिक उन्नति के लिए चरित्र की पवित्रता के साथ-साथ अष्टांग योग द्वारा आत्मा में परमात्मा के दर्शन की योग्यता पैदा करना अपेक्षित है तथा सामाजिक उन्नति के लिए सामाजिक कर्त्तव्यों का पालन अपेक्षित है। देवपूजा, संगतिकरण तथा दान द्वारा इस सामाजिक भावना का विस्तार होता है।

अभ्यास

1. 'वेद सब सत्य विद्याओं की पुस्तक है' का अभिप्राय स्पष्ट करें।
2. आर्य समाज के चौथे नियम की व्याख्या करें।
3. 'धर्मानुसार अर्थात् सत्य-असत्य को विचार कर' का भाव स्पष्ट करें।
4. उन्नति कितने प्रकार की होती है?

पाठ-4

अभियान गीत

धरम बाँसुरी तू बजाए चला जा,
जो सोते हैं उनको जगाए चला जा।
मिटा दे तू नफरत को यकलख्त दिल से।
गले से तू सबको लगाए चला जा।।1।।

कुकर्मों की कीचड़ में जो फँस रहे हैं।
अविद्या अँधेरे में जो धँस रहे हैं।
उन्हें सत्य-पथ तू बताए चला जा।
धरम बाँसुरी तू बजाए चला जा।।2।।

निराकार प्रभु है सभी में समाया।
सभी फिर हैं अपने, न कोई पराया।
घृणा फूट मन से मिटाए चला जा।
धरम बाँसुरी तू बजाए चला जा।।3।।

चुराना नहीं लोभवश धन किसी का।
दुखाना नहीं तुम कभी मन किसी का।
यह सन्देश घर-घर सुनाए चला जा।
धरम बाँसुरी तू बजाए चला जा।।4।।

जगत युद्ध की आग में जल रहा है।
प्रबल चक्र अन्याय का चल रहा है।
मनुजता जगत को सिखाए चला जा।
धरम बाँसुरी तू बजाए चला जा।।5।।

प्रकाशार्थ ग्रामों, गली, हाट, घर में।
नगर, देश, देशान्तरों विश्व भर में।
दयानन्द की जय मनाए चला जा।
धरम बाँसुरी तू बजाए चला जा।।6।।

भाव : मनुष्य को धर्म का स्वयं आचरण कर उसका प्रचार भी करना चाहिए। लोगों को नफरत, दुष्कर्म एवं अविद्या से दूर कर सत्य पथ दिखलाना चाहिए। हम सभी ईश्वर की सन्तान हैं इसलिए सभी एक हैं। आपस में घृणा व फूट का कोई स्थान नहीं होना चाहिए। संसार में युद्ध और अन्याय को समाप्त करने के लिए मानवता रूपी धर्म को अपनाना आवश्यक है। ऋषि दयानन्द का सन्देश विश्व के कोने-कोने में पहुँचाना हमारा लक्ष्य है।

अभ्यास

1. लोगों को कुकर्मों से बचाने और अविद्या से हटाने के लिए क्या करना आवश्यक है?
2. क्या समझ जाने पर आपस की फूट और घृणा दूर हो सकती है?
3. युद्ध और अन्याय से बचाने के लिए क्या सिखाना आवश्यक है?

हमेशा आगे बढ़ते रहने और विश्वास करने से कठिनाई दूर हो जाती है और जो असम्भव दिखता है, वह भी सम्भव हो जाता है।